



(1936-2009)

ध्यान पत्रिका

प्रेरक : डॉ० शम्भू नाथ

M.Sc., Ph.D.

वर्ष-21

जुलाई-2011

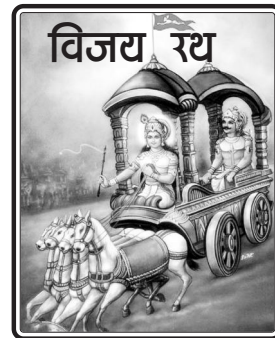
अंक-7

ध्यान शिविर में आप सपरिवार सादर आमन्त्रित हैं।

दि० 10, 11 व 12 सितम्बर (शनिवार, रविवार, सोमवार)

पंजाबी धर्मशाला (राजगुरु मार्केट), आर्य बाजार, हिसार

फोन : 9416164702, 9416041346



आज संसार में हर मनुष्य अपनी महाभारत खुद लड़ रहा है: परंतु उसके पास श्रीकृष्ण रूपी सारथी नहीं है। ऐसे में हमें महापुरुषों द्वारा दिए निर्देशों को ध्यान में रख कर संसार रूपी युद्ध को जीतना होगा।

प्रकाशक

ध्यान सत्संग सभा

हिसार (हरियाणा), मो. : 09416164702, 09416041346

हर पल को आनन्द का उत्सव मनाएं



23-11-1926
24-04-2011

श्री सत्य साई बाबा

कस्तूरी कुण्डल बसे, मृग ढूँढे वन माहिं।

ऐसे घट-घट में राम हैं: दुनियां देखे नाहिं॥

राम आनन्द के प्रतीक हैं। आनन्द के लिए : समय का इन्तजार करने की जरूरत कहाँ है? हर पल आनन्द है। जरूरत इन पलों को पहचान कर आनन्द का उत्सव मनाने की है। मनुष्य को जीवन ही : आनन्द से पूर्ण करने के लिए मिला है।

वर्तमान सेकंड के पश्चात् जो अगला सेकंड आता है: वही वास्तव में नवीन होता है। आगामी सेकंड का ही उत्सव मनाओ : जिससे आपको स्थायी आनन्द की प्राप्ति हो सके। वास्तव में मनुष्य इस दुनिया में आता ही इसलिए है : कि अपने आपको आनंद से पूर्ण कर सके। इसीलिए उसे बुद्धि, मस्तिष्क, स्मरणशक्ति, वाक्शक्ति, साहस और चेतना से युक्त किया गया है। केवल मानव को ही ऐसा अवसर और क्षमता हासिल है। अन्य प्राणियों के पास ऐसी शक्तियां नहीं हैं। परन्तु मनुष्य अपने जीवन का उद्देश्य ही भूल गया है। वह क्षुद्र आनंद के पीछे-पीछे जंगल में भटक रहा है। वह भ्रमित होकर इस प्रकार के आनन्द को अपने लिए सम्मानपूर्वक और कल्याणकारी भी माने हुए है। आनन्द और शांति प्राप्त करने का मानव का संकल्प : उस दीपक की लौ की तरह प्रकम्पित नहीं होना चाहिए जिसे खिड़की की चौखट पर रखा गया हो और थोड़ी सी हवा में ही बुझ जाए। उसे किसी मनीषी या विद्वान से यह हासिल करने का प्रयास करना चाहिए, ताकि वह हमेशा टिमटिमाता रहे। एक बार किसी पथ का चयन करने के बाद उसका लगन से अनुकरण करते रहो : चाहे आपको कितनी भी तीखी आलोचना झेलनी पड़े। किसी संकट या परेशानी से आपका विश्वास डगमगाना नहीं चाहिए। ऐसी परेशानियां तो बनने मिटने वाले बादल के समान हैं। इनकी छाया कितनी देर की होती है? ये चंद्रमा या सूर्य के प्रकाश को कुछ देर के लिए ही अवरुद्ध कर सकते हैं। □

आत्मशक्ति को पहचानकर : कर्तव्य का पालन करो



॥ आचार्य विद्यासागर

कौन कहां से आया है, कहां जाएगा? आया है तो उसे जाना होगा, यह निश्चित है। आने-जाने का प्रवाह निरंतर है। महावीर भगवान इस प्रवाह के बीच तटस्थ ही नहीं:

बल्कि आत्मस्थ रहे। तभी वे वास्तव में महावीर बने। उषा के बाद निशा और निशा के बाद उषा आएगी। जो यह जान लेता है : वह दोनों के बीच सहजता से जीता है। वस्तु तो वही है जो प्रतिक्षण उत्पन्न और नष्ट होते हुए भी : अपने स्वरूप में स्थित है। भगवान महावीर की यात्रा भी : अरुक्त थी, वह संसार में रुके नहीं। सतत् बढ़ते ही गए। जो इस प्रवाहमान जगत में निरंतर अपने आत्म-स्वरूप की प्राप्ति की ओर बढ़ रहा है और वृद्धिगत हो रहा है: वही वर्द्धमान है। उसका प्रतिक्षण नित नवीन वर्तमान है।

महावीर भगवान अपनी आत्मा में निरंतर प्रगतिशील थे। वर्द्धमान चारित्र के धारी थे। जो शाश्वत है और जो कभी खो नहीं सकता : महावीर भगवान उसी के खोजी थे। उनका उपदेश भी यही था कि

जो नश्वर है और मिटने वाला है : उसे पकड़ने का प्रयास हो या उसे स्थिर बनाने का प्रयास: दोनों व्यर्थ हैं। वास्तविक सुख तो अपनी अविनश्वर आत्मा को प्राप्त करने में है। जो सुख-दुख के पार है, जो संयोग-वियोग के पार है : उसका जन्म भी नहीं है, उसका मरण भी नहीं है और वह जो मृत्युंजयी है : वह हमेशा बना ही रहता है।

श्री कृष्ण ने (2.27) में यही तो समझाया था कि: जो कर्मयोगी है, वह जन्म-मरण का विचार नहीं करता। वह तो जीवन-मरण के बीच जो शाश्वत आत्मतत्त्व है उसका विचार करता है और कर्तव्य में तत्पर रहता है।

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्ममृतस्य च।

तस्मादपरिहार्येऽर्थे, न त्वं शोचितुमर्हसि।।

जन्मे हुए मरते, मरे: निश्चय जन्म लेते कहीं।

ऐसी अटल जो बात है: उसकी उचित चिन्ता नहीं ॥

अर्थात् जिसका जन्म है: उसकी मृत्यु अवश्यंभावी है और जिसकी मृत्यु है: उसका जन्म भी अवश्य होगा। यह अपरिहार्य चक्र है। इसलिए हे अर्जुन! सोच में मत पड़। अपने धर्म का पालन करना ही इस समय श्रेयस्कर है। हम शरीर की उत्पत्ति के साथ अपनी उत्पत्ति और शरीर के मरण के साथ अपना (आत्मा का) मरण मान लेते हैं: क्योंकि अपनी वास्तविक आत्म सत्ता का हमें भान ही नहीं है। जन्म जयंती मनाना तभी सार्थक होगा : जब हम अपनी शाश्वत सत्ता को ध्यान में रखकर अपना कर्तव्य करेंगे और इसी की संभाल में अपना जीवन लगाएंगे।

भगवान महावीर स्वामी का कहना था : मात्र जन्म ही सत्य नहीं है और न मरण ही सत्य है। सत्य तो वह ही है: जो जन्म-मरण दोनों से परे है। जो व्यक्ति मरण से डरता है, वह कभी ठीक से नहीं जी सकता। लेकिन जो मरण के प्रति निश्चित है, मरण के अनिवार्य सत्य को जानता है : उसके लिए मरण भी प्रकाश बन जाता है। वह साधना के बल पर मृत्यु पर विजय पा लेता है।

हमें आत्मा के रहस्य को समझने के लिए: अनेकांत, अहिंसा और सत्य की दृष्टि की आवश्यकता है। यदि एक बार यह ज्योति (आंख) मिल जाए :

तो मालूम होगा कि हम व्यर्थ चिन्ता में डूबे हैं। हर्ष विषाद और इष्ट-अनिष्ट की कल्पना व्यर्थ है। आत्मा अपने स्वरूप में शाश्वत है।

भगवान महावीर अपने स्वभाव की ओर देखने वाले थे। वे संसार के

बहाव में बहने वाले नहीं थे। हम इस संसार के बहाव में निरंतर बहते चले जा रहे हैं और बहाव के स्वभाव को भी नहीं जान पाते हैं। जो बहाव के बीच आत्मस्थ होकर रहता है : वही बहाव को जान पाता है। आत्मस्थ: होना यानी अपनी ओर देखना। जो आत्मगुण अपने भीतर है: उन्हें भीतर उतरकर देखना। अपने आपको देखना, अपने आपको जानना और अपने में लीन होना – यही आत्मोपलब्धि का मार्ग है। आत्मा अनंत है।

भगवान महावीर ने अपने आत्मबल द्वारा अपना कल्याण किया और हमारे लिए कल्याण का मार्ग बताया। लेकिन हम इस जन्म के चक्र से स्वयं को निकाल नहीं पाए। हमारा जीवन धर्म अमृत की वर्षा होने के उपरांत भी अमृतमय नहीं हुआ। भीतर तक झांकने के लिए अंतर्मन की निर्मलता चाहिए। अपने अंतर्मन को निर्मल बनाने का प्रयास करें। पापों से मुक्त होकर, कलुषित भावों को छोड़कर आत्मस्थ होने का प्रयास करें। □



(1936-2009)

“मैं” दुःख का कारण

✍ डॉ० शम्भूनाथ

“मैं” की ओर अगर सूक्ष्म दृष्टि से देखें: तो हमें ज्ञात होगा कि यह “मैं” केवल उन क्षणों में ही रहता है, जब मनुष्यों के जीवन में बुद्धि सक्रिय रहती है। जब बुद्धि की सक्रियता नहीं रहती जैसे कि नींद या स्वप्न में: उस समय यह “मैं” भी नहीं रहता। यदि कोई घर से ताजमहल तक पहुंच जाता है, तो यह कहा जाएगा कि वह घर से ताजमहल पहुंचने तक ताजमहल के रास्ते पर था। इसी तरह रात्रि में सोने की अवस्था में आने वाला व्यक्ति प्रातःकाल जाग जाने की अवस्था में आ जाता है, तो कहा जाएगा कि सोने की अवधि में वह

जागने के रास्ते पर था। यह एक सत्य है: जिसका अनुभव हम नित्य करते हैं। इसलिए स्पष्ट है कि सोते समय हम जागने के रास्ते पर हैं और इस अवधि में बुद्धि बिल्कुल निष्क्रिय रहती है। इसी तरह प्रातः काल जाग जाने के बाद हम बुद्धि के आधार पर ‘मैं’ द्वारा विभिन्न क्रियाओं में व्यस्त हो जाते हैं और इस कारण क्रमशः थकते भी जाते हैं, जिसके परिणाम-स्वरूप रात्रि आते-आते हम पूर्णतः थक जाते हैं और सोने को विवश हो जाते हैं। निश्चय ही दिन भर हम (थक कर) सोने के रास्ते पर रहे और यह केवल इस कारण: क्योंकि इस अवधि में ‘मैं’ क्रियाशील रहा। इसलिए हमारा ‘मैं’ हमें सोने के रास्ते पर ले जाता है और बुद्धि की निष्क्रियता के समय (रात्रि में) सोते समय हम जागने के रास्ते पर रहते हैं। फिर भी कोई शक्ति या सत्ता ऐसी है, जो सोते समय नाम लेकर पुकारने पर हमें जागृत कर देती है। **यह सुख देने वाली निर्गुण-निराकार सत्ता ही: हरि है जो मैं की अनुपस्थिति में सक्रिय हो जाती है। हमें जागने के रास्ते पर ले जाती है।** प्रातः काल जागने के बाद रात्रि में सोने के समय तक मैं की उपस्थिति के कारण हरि अनुपस्थित हो जाता है और तब मैं हमें प्रातः से रात्रि तक सोने के रास्ते पर ले जाता है। हम देखते हैं कि मैं और हरि दोनों एक साथ नहीं रहते। सन्त कबीर अनुसार :-

जब हरि है : तब मैं नाहिं।

और जब मैं था : हरि नाहिं॥

हरि हमें जगाने के जिस रास्ते पर ले जाने का प्रयास करता है: हमारा मैं हमें उसके विपरीत सुलाने के रास्ते पर ले जाता है। यदि हम दृष्टि ले जाएं: तो दिखाई पड़ेगा कि हर मनुष्य अपने आपको (हरि के विरुद्ध चल कर) थकाने के रास्ते पर ले जा रहा है; चाहे वह रास्ता पैसा पैदा करने का हो, स्वास्थ्य बनाने का हो, प्रेम जगाने का हो या ईश्वर को ही ढूंढने का क्यों ना हो।

ईश्वर को सोने के रास्ते पर चल कर ढूँढना: इतनी बड़ी माया (गलत फहमी) है कि इस माया-जाल से निकलना अत्यन्त कठिन हो जाता है। न मालूम कितने मनुष्य अपना पूरा जीवन सोने के रास्ते पर चल कर ईश्वर को ढूँढने में नष्ट कर देते हैं। उन्हें रास्ता दिखाने वाले जो व्यक्ति मिले : उन्हें स्वयं कभी जीवन के इस सत्य का अनुभव नहीं हुआ, कि

ईश्वर क्या है और किस रास्ते पर चलकर मिलेगा ?

जिस प्रकार यदि किसी व्यक्ति को कुछ चाहिए : पर उसे यह पता न हो कि वह चीज क्या है, कैसी है और कहाँ मिलेगी ? तो उसे पाना कठिन होगा।

साधकों को यह जानने की जरूरत है कि ईश्वर सबसे ऊंची जाग है। अतः वह जागृत अवस्था की जाग को और अधिक बढ़ाते जाने के अन्तिम छोर पर ही है। जाग मन की अनुभव शक्ति है। मन बाहर के अनन्त सत्त्यों और अन्दर के केवल एक सत्य को अनुभव करने वाला है। सत्य की परिभाषा ही यह होगी कि सत्य वह है: जिसे मन अनुभव कर सके। अनन्त सत्त्यों का आधार केवल वही एक सत्य है: जो भावातीत क्षेत्र में व्याप्त है। मनुष्य का मन भीतर के भावातीत क्षेत्र में एक सत्य और बाहर के अनन्त सत्त्यों को पूर्ण रूप से अनुभव करने में सक्षम है।

मन इन सारे सत्त्यों को पूर्ण रूप से अनुभव करने की शक्ति प्राप्त कर ले: यही मन में जाग का विकास कहलाता है। संत कबीर फरमाते हैं :-

मन के मारे वन गए, वन तजि: बस्ती माहिं।

कहैं कबीर क्या कीजिए, यह मन ठहरै नाहिं॥

मन की चंचलता को रोकने के लिए वन में गए। वहाँ जब मन शांत नहीं हुआ, तब पुनः बस्ती में आ गए। गुरु कबीर कहते हैं :-

जब तक मन शांत न होगा: तब तक तुम क्या आत्म कल्याण करोगे ?

जाग बढ़ाने का रास्ता कभी न छोड़ें

यदि हम अपनी सबसे छोटी जाग (सोकर प्रातः उठने तक के समय की जाग) को सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो इस रास्ते का ज्ञान होना कठिन नहीं होगा। निद्रा की अवस्था में किसी की बुद्धि कभी सक्रिय नहीं रहती। इसे हम यों भी कह सकते हैं कि बुद्धि के आराम में ही: जाग का बढ़ना है। बहुत से साधकों को यह गलत फहमी हो जाती है कि शायद हम यह कह रहे हैं: कि सोने में जाग है। यह बिल्कुल गलत है। जाग बढ़ने की बात बुद्धि के आराम (निष्क्रियता) या प्रयासहीनता में है। कुछ भी न करने में है : अर्थात् जो हो रहा है, उसे होने देने में है। यह बात सोते समय भी रहती है। इसलिए सोने का उदाहरण देकर समझा दी जाती है। ध्यान का जो यह नया रास्ता शुरू हुआ है :-

क्या यह एक मात्र जाग के बढ़ाने का रास्ता नहीं है ?

और यदि है: तो केवल यही सबसे ऊंची (अद्वैत की) जाग प्राप्त करने का रास्ता है, ईश्वर के दर्शन (प्राप्ति) का रास्ता है। अखण्ड की शक्ति प्राप्त करने का रास्ता और जीवन के अनन्त बाध्य पहलुओं में उसे उतारकर सर्वश में सुखी हो जाने का रास्ता है।

जीवन के बाह्य अनन्त पहलुओं में अखण्डता उतारने का अर्थ है : कि साधना में समय बीतने के साथ-साथ जीवन के अनन्त पहलू (स्वास्थ्य, शक्ति, ज्ञान, प्रेम), सभी पहले से ज्यादा अच्छे होते चले जाएं। यह अखण्डता जीवन में; किसी भी खण्ड की शक्ति द्वारा नहीं प्राप्त की जा सकती।

जब मनुष्य जागृत अवस्था में प्रतिदिन : मैं (अर्थात् बुद्धि की सक्रियता) हटाकर जाग को बढ़ाता जाता है तो धीरे-धीरे उसे -

1. भावातीत जाग, 2. ब्रह्म की जाग, 3. ईश्वरीय जाग से भी ऊंचे उठकर, 4. अद्वैत की जाग प्राप्त होगी,

तब उसे सृष्टि की सबसे बड़ी सत्ता (ईश्वर) का दर्शन हो जाता है और वह अपनी बड़ी से बड़ी इच्छा को भी तत्काल पूर्ण करने में समर्थ हो जाता है : चूंकि इसके बाद पाने के लिए कुछ शेष नहीं बचता, इसलिए इस अवस्था को भी मोक्ष की अवस्था कहते हैं। ध्यान माला

दोहा-16 : मानव योनि अमोल है, मेटे दुःख अमूल।

अद्वैत चेतना प्राप्त कर, छोड़े अछत टुकूल ॥

अछतः (अक्षत) का अर्थ है, जिस में कोई टूट-फूट न हो।

टुकूल : (कपड़ा)-शब्द अध्यात्म में शरीर के लिए प्रयोग किया जाता है। गोस्वामी तुलसी दास के कथनः

लहहिं चारि फलं (अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष) और अछत तनु (शरीर रहते ही) का यही वास्तविक अर्थ है। अछत तनु, शब्द की उपस्थिति में मरने के बाद मोक्ष पाने या मां के पेट में पुनः न आने का अर्थ करना कितना निरर्थक है, यह यहां स्पष्ट हो जाता है। जब तक हम इस लक्ष्य को प्राप्त न कर लें, तब तक हम खण्ड की शक्तियों की भी मदद लेते रहें। खण्ड की सहायता प्राप्त करने के लिए चाहे जिस क्रिया में भी हम व्यस्त क्यों न हों, बीच-बीच में कुछ समय के लिए : बुद्धि को निष्क्रिय कर अखण्ड की शक्ति को उभारने के लिए भी हमें समय अवश्य निकालना चाहिए। अर्थात् जाग के बढ़ाने का रास्ता कभी छोड़ना नहीं है। यदि जीवन को सुधारना है तो अखण्ड की शक्ति का ऊपर बताया हुआ जाग बढ़ाने का रास्ता अपने जीवन में जोड़ दें : चाहे हम किसी भी रास्ते पर क्यों न चल रहे हों। जब जाग बढ़ाने के रास्ते पर भी हम चल पड़ेंगे : तो उसे अनुभव होने लगेगा कि खण्ड की शक्ति के कुछ क्षेत्र धीरे-धीरे

अपने आप छूटने लगे हैं। या यह कहें कि उन क्षेत्रों की व्यस्तता (क्रियाएं) कम हो रही हैं। और अखण्ड के क्षेत्र की व्यस्तता (ध्यान का समय-जाग बढ़ाने का समय) बढ़ रही है : एक ही बात है और यदि ऐसा हो रहा है तो वह निश्चय ही सही रास्ते पर है।

ध्यान कम करता है : “मैं” की ताकत

हमारे जीवन में ईश्वरीय शक्ति : (होने की शक्ति के रूप में) हर क्षण काम करती रहती है। आराम के समय हमारा “मैं” काम नहीं करता। उस समय हमारी थकावट बाहर निकलती है। यह थकावट केवल क्रियाओं के समय ही आती है और क्रियाओं के समय “मैं” उपस्थित रहता है। “मैं” (Ego) की शक्ति ईश्वरीय शक्ति की दिशा के विपरीत ही रहती है। जिस समय हम रात में सोते हैं, उस समय थकावट निकलने के साथ-साथ स्वप्न भी आते हैं। कहा जाता है कि बाहर की क्रियाओं के समय उनका जो प्रभाव हमारे मन पर पड़ता है : वही स्वप्न के समय निकलता है। यह प्रभाव तो उसी समय पड़ते हैं : जब हमारा “मैं” काम करता रहता है। हमारे शरीर में पाचन की भी क्रिया होती है : लेकिन यह एक मात्र होने की शक्ति के आधार पर होती है। पचने में अहं (Ego) का प्रश्न ही नहीं उठता।

यह मान्यता सदियों से चली आ रही है कि सभी के अन्दर उसके जन्म-जन्मान्तर के संस्कार रहते हैं। इन संस्कारों के बनने का कारण हमेशा बाहर की क्रियाएं ही होती हैं। जिस प्रकार गहरे पानी के अन्दर एक उछाल की शक्ति होती है, जो उसमें गोता लगाने वाले को हमेशा बाहर फेंकने में लगी रहती है। उसी प्रकार से जब मन अन्दर के ईश्वरीय तत्व और संस्कारों के क्षेत्र में जाता है : तब संस्कारों में जितना घनापन होता है, उतना ही उनमें मन को बाहर इन्द्रियों के क्षेत्र में भेजने की शक्ति ज्यादा रहती है। संस्कारों के घनेपन की अवस्था ही राक्षस

रूपी “मैं” की शक्ति है। यह शक्ति ध्यान द्वारा धीरे-धीरे कम होती जाती है। इसी को अन्दर राक्षस की शक्ति का कम होना या “मैं” (Ego) को मिटते जाना कहते हैं। मन धीरे-धीरे ब्रह्म के क्षेत्र में : दूसरे शब्दों में विचार के उद्गम स्थान के निकट रहकर बाहर की दुनियां में क्रिया करने के योग्य होता जाता है। मन की इस अवस्था को ही राम-भक्त रूपी “मैं” (Internal Consciousness) कहा जाता है। समझना कितना आसान है कि रावण रूपी “मैं” और राम भक्त रूपी “मैं” में कितना अन्तर है? राक्षस रूपी “मैं” को तो मिटाना है, रामभक्त रूपी “मैं” को बढ़ाना है : या ये कहें कि और शक्तिशाली बनाना है।

ज्यों-ज्यों राक्षस रूपी “मैं” (Ego) बदलकर राम भक्त रूपी “मैं” (Internal Consciousness) का रूप धारण करता जाता है :

मन आनन्द के सतह के समीप रहने लगता है और ऐसी अवस्था में हर क्रिया आनन्द के समुद्र की सतह पर हलचल मचाती है। इस हलचल के मचने से सतह पर आनन्द की लहरों की उछाल बढ़ जाती है। क्रियाओं द्वारा आनन्द के समुद्र की सतह पर जो लहरें उठती हैं: वे मन को इतना बड़ा सुख प्रदान करती हैं, जिसे छोड़कर मन इन्द्रियों के छोटे सुख की ओर मुड़ना पसंद नहीं करता। राम भक्त का “मैं” धीरे-धीरे जब अद्वैत चेतना की ओर अग्रसर होता है, तब वह राम या कृष्ण के “मैं” का रूप धारण कर लेता है। इस तरह से हम देखते हैं कि “मैं” एक शक्ति है।

पतन की अवस्था में शक्ति हमेशा ही मन को इन्द्रियों के क्षेत्र की ओर उछालने में लगी रहती है। इस राक्षस रूपी “मैं” को मिटाने का अर्थ इस “मैं” की यह शक्ति संस्कारों का घनापन कम होते जाने से कम होती जाती है और साथ ही साथ अपने आप मन को आनन्द के क्षेत्र में ज्यादा

देर तक बने रहने की शक्ति बढ़ती जाती है। राम या कृष्ण का “मैं” क्रियाशील हो जाता है और राम का “मैं” इन्द्रिय जगत में बाहर के जगत के “मैं” के साथ रहने लगता है और तब क्रियाओं का आधार राम का “मैं” (Internal Consciousness) हो जाता है। क्रियाओं का आधार हमेशा ही “मैं” की शक्ति होती है। “मैं” (Ego) मिटने का अर्थ है कि हमारी क्रियाओं का आधार राम कृष्ण का “मैं” (Internal Consciousness) होना चाहिए।

ईश्वर के प्रति समर्पण

श्री गंगाधर बंसल

ध्यान साधना का उद्देश्य और लाभ के बारे में आमतौर पर व्यापार में लाभ, अच्छा स्वास्थ्य, इच्छाओं की पूर्ति और धन सम्पत्ति में प्रगति आदि का वर्णन करते हैं। यह सब बाहर की भौतिक उन्नति है। किन्तु आत्मोत्थान और आध्यात्मिक उन्नति को कैसे जानें ?

ध्यान सत्संग का मतलब है: कि आंखें बन्द करके एकान्त में चुपचाप बैठकर सत् का संग: अर्थात् ईश्वर को अपने अन्दर से मिलना। किसी प्रकार के शोर, ढोलक, चिमटा आदि बजाने से मन अन्दर की बजाय बाहर संसार में आ जाता है। हम अंतर्मुखी से बहिर्मुखी हो जाते हैं। वृक्ष की जड़ें पृथ्वी के अन्दर से खाद-पानी का रस लेकर तना, डाली, शाखाएं, पत्ते, फूल और फल बना देती हैं। हम इन फल, फूल, पत्तों आदि को देखकर जान जाते हैं कि वृक्ष अन्दर के रस से भरपूर है। ठीक इसी प्रकार बाहर के स्वास्थ्य, धन आदि की भरमार को देखकर अन्दर की आध्यात्मिक प्रगति का अहसास होता है। इसके अतिरिक्त साधकगण अपने सन्तोष, वैराग्य, आनन्द, खुशी और शान्ति आदि की प्राप्ति का

अनुभव भी बताते ही रहते हैं। ये सब कुछ अन्दर की सूक्ष्म आध्यात्मिक प्रगति के चिन्ह ही तो हैं। इन्हें बिना देखे भी अन्य लोग साधकों की प्रशंसा करके प्रेरणा प्राप्त करते हैं। चेतना का उत्थान ध्यान अथवा समर्पण द्वारा ही सम्भव है। समर्पण हो जाता है, किया नहीं जाता। ध्यान के समय मन हमारे प्रयास से नहीं: बल्कि अपने आप ईश्वर के क्षेत्र में विलीन हो जाता है। अर्थात् ईश्वर की शक्ति के समुद्र में चला जाता है। इसे मन का ईश्वर को समर्पण होना कहते हैं। इस मन के समर्पण (ध्यान अथवा Meditation) को सभी बड़ी आसानी से कर सकते हैं। समर्पण कुछ खास व्यक्तियों की ठेकेदारी नहीं है। सबको इसका अधिकार है। शुरू में किसी ध्यान करने वाले से सम्पर्क करके : ध्यान की विधि पूछ लें। अभ्यास करते-करते आपके सभी प्रश्नों और समस्याओं का समाधान अपने अन्दर से ही मिलने लगेगा। ईश्वर का सीधा मोबाईल-नम्बर आपको मिल जाएगा। जब चाहो उससे कोई भी प्रश्न पूछ लो अथवा अपनी कोई भी इच्छा पूरी कर लो। यहां तक कि हर प्रकार से मुक्त होकर : अपनी इच्छा से भगवान में विलीन होकर मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। ध्यान के लिए बैठना कोई भगवान पर एहसान करना नहीं है, बल्कि यह अपने कल्याण के लिए है।

डॉ० शंभु नाथ जी ने 24 वर्ष तक निरंतर प्रत्येक मास हिसार पधार कर : यहां अनेक साधकों का निर्माण और मार्गदर्शन किया। साधकों के उल्टे सीधे और नए पुराने सभी प्रश्नों के स्टीक उत्तर बड़े धैर्य से हंसते हुए देते रहे। हम उनके बहुत-बहुत आभारी हैं। □

शंका समाधान

✍ **इन्जीनियर पी. के. चौधरी**

मैं 8-9 साल सच्चाई की खोज में कहीं-कहीं भटकता रहा। डॉ०

शंभुनाथ जी के सम्पर्क में आकर पूरा संतुष्ट हो चुका हूं। मेरे अनेक प्रश्नों का उत्तर देते हुए, एक बार उन्होंने कहा कि चौधरी ! आपके सब प्रश्नों का उत्तर ध्यान के समय अन्दर से लेने पर ही पूर्ण संतुष्टि होगी। अब तो अन्दर के उत्तरों के कारण मेरे प्रश्न ही समाप्त हो गये हैं। मेरी करनी के, होनी में बदल जाने से : बाहर के बड़े कठिन कामों की सफलता को देखकर मैं ही नहीं, अपितु दूसरे सभी भी दंग रह गए हैं। सबसे बड़ी बात: अब मैं मायावी संसार की अपेक्षा ईश्वर की शक्ति (आनन्द या Internal Bliss) को ही अधिक महत्व देने लगा हूं।

शक्तियां दो प्रकार की होती हैं। अन्दर की और बाहर की। ध्यान साधना द्वारा अन्तर्मुखी होकर जो शक्ति प्राप्त होती है। उससे दया, करुणा, सेवा, क्षमा आदि का स्वभाव बन जाता है। इसलिए शक्ति का हमेशा सदुपयोग ही होता है। समर्पण के बिना प्रभु से मिलना कठिन है : इसके लिए आपको प्रतिदिन ध्यान के अभ्यास में बैठना अत्यन्त जरूरी है।

करत-करत अभ्यास के जड़ मति होत सुंजान।

रस्सी आवत-जात से, सिल पर पड़त निशान।।

ध्यान के समय माला, जाप, कीर्तन आदि कुछ नहीं करना है। बाकी किसी भी समय आप जो चाहो कर लो। अपने आप को प्रसन्न रखने के लिए शक्तियां दो हैं : होनी की शक्ति और करनी की शक्ति। जो बड़ी शक्ति अर्थात् 'होनी की शक्ति' को प्रयोग में लाकर : पराजगत के देवी देवताओं को जागृत करने में सफल हो जाता है, वह इन्द्रिय जगत के कर्मों का प्रयोग, जीवन में उसी अनुपात में कम करता है और यह सब ध्यान के अभ्यास द्वारा स्वयंमेव ही हो जाता है। ध्यान के सद्मार्ग पर लाने के लिए हम डॉ० शम्भू नाथ जी के बहुत-बहुत आभारी हैं। □

ध्यान माला

श्री कुबेर प्रसाद 'गुप्त कबीर'

दोहा-18 : सभी कर्मों की प्रतिक्रिया : होती निश्चय जान।

सब स्तर से लौटती : सके न हम पहिचान॥

प्रत्येक क्रिया की प्रतिक्रिया अवश्य होती है : यह भौतिकवादी और आध्यात्मवादी दोनों ही मानते हैं। कुछ भौतिकवादी (बुद्धिवादी) शिक्षक इस नियम के आधार पर यह सिखाने लगे हैं कि यदि तुम किसी को सुख दोगे तो, सुख देने में तुम्हें चाहे जितना दुख अपनाना पड़े, तुम्हारे जीवन में सुख लौटकर जरूर आयेगा तथा इसी प्रकार दुख अपनाने से दुख भागेगा।

इस सिद्धान्त के आधार पर साधक दुख को अपनाने और सुख देने का प्रयासपूर्ण अभ्यास करते हैं। लेकिन सुख देते समय हम यह बात कैसे भूल सकते हैं कि सुख तो केवल इसलिए दे रहे हैं कि हमें सुख मिले। ऐसी साधना अपनाने पर जब वे अपने व्यवहारिक जीवन में यह देखते हैं कि जिसे मैंने सुख दिया : उसी के द्वारा मुझे दुख मिलने लगा, तो वे असमंजस में पड़ जाते हैं। समाज में बहुत से लोगों को यह शिकायत करते हुए सुना जाता है कि जिसके लिये मैंने बहुत कुछ किया: वही अब मेरे लिए कुछ भी करने को तैयार नहीं है या मेरा विरोध करता है। नीचे ऐसी परिस्थितियों एवं भ्रान्तियों के बारे में वस्तुस्थिति प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है :-

बाहर के जगत का फैलाव अनन्त स्तर तक है। मनुष्य द्वारा क्रियाएं की जाती हैं। उनसे वायुमण्डल में तदनुरूप तरंगे उत्पन्न होती हैं। ये तरंगें सृष्टि के अनन्त स्तरों से टकरा कर अनन्तकाल तक प्रतिक्रिया के रूप में क्रिया करने वाले के पास लौटती हैं। इसलिये सुदूर के चांद, तारों तथा अन्य ग्रहों के स्तरों से टकराकर लौटने वाली प्रतिक्रियाएं इसी जन्म में क्रिया करने वाले के पास लौट आवेंगी : या उनके लौटने तक मनुष्य दूसरा जन्म ले लेगा, नहीं कहा जा सकता। बुद्धि की क्षमता सीमित होती है और वह एक सीमा तक ही तर्क-वितर्क और विश्लेषण द्वारा निर्णय ले

सकती है। इसलिये बुद्धि के अनुशासन के आधार पर बनाये गये सिद्धान्त जीवन की समग्रता के परिपेक्ष्य में सत्य की कसौटी पर खरे नहीं उतरते।

क्रिया की प्रतिक्रिया तो अवश्य होती है, लेकिन क्रिया के बाद प्रतिक्रिया के लौटकर आने का अन्तराल तथा जिस स्तर से टकराकर लौटती है : उसका प्रकार इतना अनजाना हो जाता है कि हम प्रतिक्रिया के प्राप्त होने पर यह समझने में असमर्थ रहते हैं कि कौन सी क्रिया: क्रिया है और कौन सी प्रतिक्रमा।

नोट :- 1. प्रत्येक रविवार को बुधला सन्त मन्दिर नज़दीक बस स्टैण्ड, हिसार में पारिवारिक सत्संग शाम को 5 बजे से 7 बजे तक होता है। आप सभी सपरिवार सादर आमन्त्रित हैं।

2. ध्यान सम्बन्धी अपने अनुभव, लेख, आलोचना (Comments), अनुभूतियां, प्रश्नोत्तर, शंका-समाधान इत्यादि इस पते पर भेज सकते हैं :-

-सुरेश कुमार गुप्ता

1618, अर्बन एस्टेट-II,

पुष्पा कम्पलैक्स के पीछे, हिसार-125005

PRINTED MATTER